पुरोपनीतं नृप रामणीयकं द्विजातिशेषेण यदेतदन्धसा।

तदद्य ते वन्यफलाशिनः परं परैति कार्श्यं यशसा समं वपुः ॥३९॥

अन्वय-

नृप! यत् एतत् वपुः पुरा द्विजातिशेषेण अन्धसा रामणीयकम् अपनीतम् वन्यफलाशिनः ते तद् वपुः अद्य यशसा समं परं कार्श्यं परैति ॥३९॥

अर्थ-

हे राजन् ! आपका जो यह शरीर पहले ब्राह्मणों के भोजनादि से शेष अन्न द्वारा परिपोषित होकर मनोहर दिखाई पड़ता था, वही आज जंगली फल-फूलों के भक्षण से आपके यश के साथ अत्यन्त दुर्बल हो गया है ॥३९॥

टिप्पणी-

न केवल शरीर ही दुर्बल हो गया है, वरन् आपकी कीर्ति भी धूमिल हो गई है। यहाँ सहोक्ति अलंकार है।

अनारतं यौ मणिपीठशायिनावरञ्जयद्राजशिर: स्रजां रज:।

निषीदतस्तौ चरणौ वनेषु ते मृगद्विजालूनशिखेषु बर्हिषाम् ॥४०॥

अन्वय-

राजशिर:स्रजां रज: अनारतं यौ मणिपीठशायिनौ यौ ते चरणौ अरञ्जयत् तौ (अद्य) मृगद्विजालूनशिखेषु बर्हिषाम् वनेषु निषीदत: ॥४०॥

अर्थ-

सर्वदा मणि के बने हुए सिंहासन पर विश्राम करनेवाले आपके जिन दोनों पैरों को (अभिवादन के लिए झुकने वाले) राजाओ के मस्तक की मालाओं की धूलि रंगती थी, (अब) वही दोनों चरण हरिणों अथवा ब्राह्मणों के द्वारा छिन्न कुशों के वनों में विश्राम पाते हैं ॥४०॥

टिप्पणी-

इससे बढ़कर विपत्ति अब और क्या आएगी। यहाँ विषम अलंकार है।